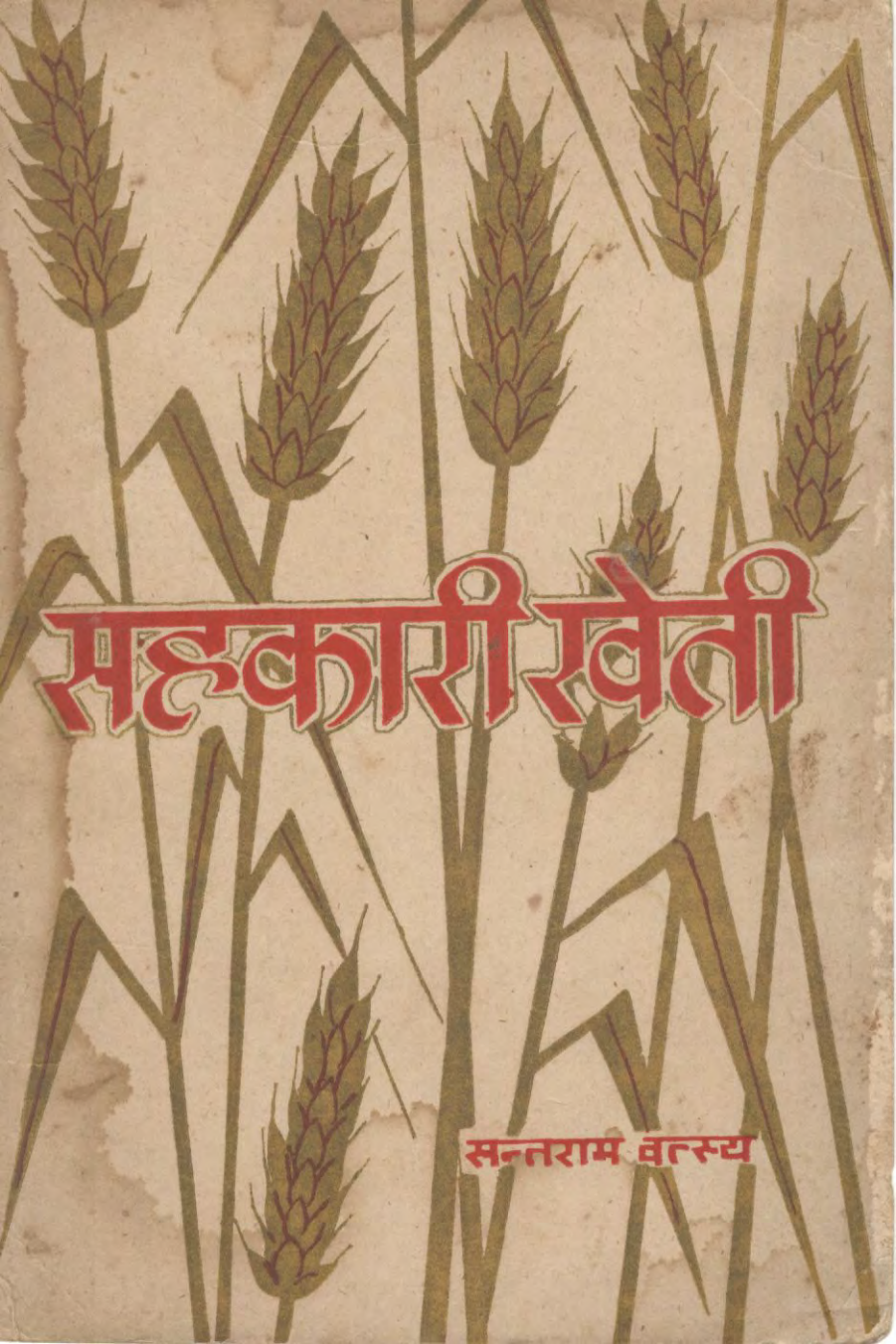
सहकारी खेती
सन्तराम वत्स्य

सहकारी खेती

सहकारी खेती सम्बन्धी सरल-सुबोध जानकारी
देने वाली पुस्तिका

सन्तराम वत्स्य

प्रकाशक
नेशनल पब्लिशिंग हाउस
दिल्ली

प्रथम संस्करण
सितम्बर १९६०

●

प्रकाशक
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

○

मूल्य
पचहत्तर नये पैसे

●

मुद्रक
बालकृष्ण, एम० ए०
युगान्तर प्रेस, मोरी गेट, दिल्ली

"क्या यह ज्यादा ठीक नहीं है कि गांव के सौ परिवार मिलजुल कर खेती करें, बजाए इसके कि वे गांव की जमीन को सौ टुकड़ों में बांटें ।"

—महात्मा गांधी

'हरिजन', १५ फरवरी, १९४२

दो शब्द

इस पुस्तिका में नवसाक्षरों को सहकारी खेती के बारे में सरल-सुबोध ढंग से जानकारी कराने का प्रयत्न किया गया है। सहकारी खेती देश के लिए सब से महत्वपूर्ण प्रश्न है। किसानों के लिए तो वह सर्वाधिक महत्वपूर्ण है ही।

देश की बढ़ती हुई आबादी के लिए अन्न जुटाना सरकार की सब से बड़ी समस्या है। अभी तक हम विदेशों से मंगा-मंगा कर खा रहे हैं। यह हमारे राष्ट्रीय चरित्र और राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था दोनों के लिए ही हानिकर है।

अब सिवा दो बातों के—एक तो यह कि बढ़ती हुई जन-संख्या को रोका जाए और दूसरा यह कि प्रति एकड़ उपज को बढ़ाया जाय—और कोई चारा नहीं है। उपज बढ़ाने के लिए सरकार ने अनेक ठोस कदम उठाए भी हैं किन्तु ज़मीन के बिखरे होने और प्रति-परिवार थोड़ी होने के कारण वे उतने कारगर नहीं हुए। किसान भाइयों के अशिक्षित होने के कारण भी वे नए तरीकों को नहीं अपना सके। इसलिए सहकारी खेती ही अब देश की एकमात्र आशा है।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तिका के प्रचार-प्रसार से सहकारी खेती के विचार को बल मिलेगा।

विनीत
संतराम

सहकारी खेती

लालचन्द—अरे भई रामदत्त, तुम दिल्ली गए थे, उस खेती-बाड़ी की नुमायश में क्या कुछ देख आए ? हमें भी तो कुछ बताओ ।

रामदत्त—भई क्या बताऊं और क्या न बताऊं, अपनी समझ में तो यह ही नहीं आता । और फिर किसीको कुछ बताएं भी तो लोग सच भी तो नहीं मानते ।

लालचन्द—तो भई तुम कुछ नमक-मिर्च लगाकर कहते होगे । नहीं तो सच न मानने की ऐसी क्या बात है ।

गंगाराम—भई बात यह है कि यह गया तो था दिल्ली और बातें करता है रूस और अमरीका

की। फिर कोई सच कैसे माने।

रामदत्त—भाई लालचन्द जी, बात यह है कि दिल्ली की उस नुमायश में दुनियां के लगभग सभी देशों के लोग आए थे। हर देश का अपना-अपना पण्डाल बना हुआ था। पाण्डाल में उस देश ने खेती-बाड़ी में जितनी उन्नति की है, वह दिखाया गया था। खेती-बाड़ी के नए-नए औज़ार और फसल के नमूने वहां रखे हुए थे। बीज, खाद और सिंचाई के बारे में भी बहुत-सी बातें समझाई

गई थीं। खेती-बाड़ी में रूस और अमरीका ने तो बेहद उन्नति की है। इन देशों में प्रति-एकड़ उपज चार-छः गुणा हो गई है। वे अपना फालतू अनाज दूसरे ज़रूरत वाले देशों को बेचते हैं। उन ज़रूरत वालों में सबसे ऊपर तो हमारे ही देश का नाम है।

गंगाराम—भई, कई साल हुए नेहरू जी ने कहा था कि बस अब हम दूसरे देशों से अनाज नहीं मंगवाएंगे। तो क्या अभी तक हम दूसरे देशों से अनाज मंगवा रहे हैं? मैं तो समझता था कि नहीं मंगाते होंगे।

रामदत्त—सरकार लोगों को भूखा भी तो नहीं मार सकती। जब अपने देश में ज़रूरत जितना अनाज पैदा नहीं होता तो फिर क्या किया जाए। नुमाइश देखकर एक यह बात मालूम हुई कि रूस और अमरीका ने पैदा-

वार में जो बढ़ोतरी की है, उसके पांच कारण हैं :—

१. जुताई ट्रैक्टरों से करते हैं। इससे गहरी जुताई होती है।

२. नए-नए तरीकों से खेती करते हैं।

३. देशी और मशीनी दोनों तरह की खाद डालते हैं।

४. फसल के शत्रु कीड़ों, पशु-पक्षियों, चूहों और बीमारियों से फसल को बचाते हैं।

५. सहकारी ढंग से खेती करते हैं।

लालचन्द—हमारे किसान भाइयों के पास तो बीज तक के लिए पैसे नहीं होते। ट्रैक्टर, नए औज़ार और मशीनी खाद की बात तो दूर है।

गंगाराम—अब तो कहीं से उधार भी नहीं मिलता, जो आदमी उधार लेकर ही खरीद ले। सच तो यह है, उधार लेकर वापस कहां

से करें। आइए-आइए ग्राम-सेवक जी, आप ठीक समय पर आ गए।

ग्राम-सेवक—कहिए क्या आज्ञा है। क्या बात-चीत हो रही है?

गंगाराम—भाई रामदत्त दिल्ली गए थे न नुमाइश देखने! वहां की बातें बता रहे थे।

ग्राम-सेवक—वह नुमाइश तो किसानों के लिए ही थी। अपने देश में किस-किस प्रदेश ने खेती-बाड़ी में क्या-क्या उन्नति की और दूसरे देशों ने अपनी उपज कैसे बढ़ाई—यही सब उसमें दिखाया और समझाया गया था।

लालचन्द—कहते हैं कि नुमाइश में देखने वालों की बेहद भीड़ थी।

रामदत्त—होती क्यों न! गांव में कोई मेला हो तो वहीं हज़ारों की भीड़ होती है। फिर यह नुमाइश तो देश की राजधानी दिल्ली में हो रही थी। देश-देश के लोग वहां आए हुए थे।

गंगाराम—भीड़ की तो पूछो ही मत। शहरों में तो जहां जाओ, वहीं भीड़। बस में भीड़, रेल में भीड़। सिनेमा में भीड़। टिकट तो चाहे सिनेमा का लेना हो या रेल का, डाक का या बस का, जहां देखो वहीं लाइन लगी हुई है।

लालचन्द—उस दिन देहाती प्रोग्राम में रेडियो पर बता रहे थे कि देश की आबादी बहुत बढ़ रही है। इस समय देश की आबादी चालीस करोड़ के आस-पास है। बीस साल बाद यह बढ़कर बावन करोड़ हो जाएगी।

रामदत्त—भई नुमाइश की एक बात बताना तो मैं भूल ही गया।

लालचन्द—वह बात भी बताओ। हम तो बातें सुनने के लिए ही बैठे हुए हैं।

रामदत्त—वहां सरकार की ओर से एक पण्डाल लगा हुआ था। लाइन बनाकर लोग जा रहे

थे। मैं भी लाइन में खड़ा हो गया। सोचा कि ये पढ़े-लिखे मर्द-औरतें जा रहे हैं तो ज़रूर कुछ देखने लायक होगा।

गंगाराम—मालूम होता है, भीतर जाकर तुम्हें कुछ देखने लायक दिखाई नहीं दिया।

रामदत्त—यह बात तो नहीं है। पर इतनी बात ज़रूर है कि मैं भीतर जाकर कुछ झेंप गया। बात यह थी कि वहां यह समझाया जा रहा था कि बच्चे मत पैदा करो। और बच्चों का पैदा होना कैसे रोका जा सकता है।

लालचन्द—भला यह भी कोई आदमी के बस की बात है। यह तो भगवान् की देन है। वह चाहेगा तो बच्चे होंगे ही।

ग्राम-सेवक—लालचन्द जी, यह बात नहीं है। कोई ज़माना था कि किसान वर्षा के लिए इन्द्र देवता की मनौतियां मानता था। समय

पर वर्षा हो गई तो फसल भी हो गई, नहीं हुई तो नहीं हुई। पर आदमी ने मेहनत करके नहरें बनाईं और इन्द्र देवता को काबू में कर लिया।

बरसात ज़ोर की होती तो बाढ़ आ जाती। नदी किनारे के गांवों में पानी भर जाता! खड़ी फसलें तबाह हो जातीं। घर गिर जाते। ढोर-डंगर बह जाते। लोग सिर पर सामान उठाए मारे-मारे फिरते। लोग कहते कि भगवान् का कोप है। इससे कौन बच सकता है। लेकिन आदमी ने हिम्मत नहीं हारी। बांधों से नदियों का पानी यों बांध दिया कि किसीका बाल बांका न करे। इसी तरह की और भी कई बातें बताई जा सकती हैं। भाग के भरोसे बैठे रहना तो कोई समझदारी की बात नहीं है। अब भगवान् भी हमारी मर्ज़ी के बगैर बच्चे नहीं भेजेगा।

डाक्टरों ने ऐसी-ऐसी दवाइयां और तरीके निकाल दिए हैं कि आप चाहेंगे तभी आपके घर बच्चा होगा। लालचन्द जी, अब तो आदमी मौत पर भी काबू पाने की सोच रहा है।

तारादत्त—ग्राम-सेवकजी, ठीक कहा आपने। आदमी जो न कर गुजरे वही थोड़ा।

ग्राम-सेवक—भाइयो, बात यह है कि सरकार पैदावार बढ़ाने के लिए ज़ोर तो बहुत लगा रही है, और पैदावार बढ़ी भी है। परन्तु साथ-साथ आबादी भी बढ़ती जा रही है। इसलिए अनाज की कमी पड़ जाती है। इसलिए सरकार चाहती है कि लोग कम बच्चे पैदा करें। यह तो हमारी-तुम्हारी देखी-समझी बात है कि अगर घर में एक ही बच्चा हो तो उसकी देख-भाल तो ठीक होती है; अगर एक की जगह चार हों तो सूखी रोटियां

जुटाने में भी कठिनाई होती है। इसलिए कम बच्चे हों तो अच्छा ही है।

एक तरह से इस लड़ाई के दो मोर्चे हैं। पहला तो यह कि पैदावार बढ़ाई जाए और दूसरा यह कि आबादी को बढ़ने से रोका जाए।

गंगाराम—आपकी बात तो ठीक है। ज़मीन तो बढ़ने से रही। वह तो जितनी है, उतनी ही रहेगी। और आबादी बढ़ जाएगी तो पूरा कैसे पड़ेगा।

ग्राम-सेवक—आपने बिल्कुल ठीक कहा। अब तो ये दोनों मोर्चे जीतने पड़ेंगे। और कोई चारा भी नहीं है। दूसरे देशों से अनाज मंगवाने से देश का बहुत-सा पैसा खर्च हो जाता है। अगर अनाज न मंगवाना पड़े तो उस पैसे से मशीनें मंगवाई जा सकती हैं। मशीनों से नए-नए रोज़गार चालू हो सकते हैं और बेकारी दूर हो सकती है। और मशीनें कई-कई साल काम देंगी। अनाज तो बस आया और खाया।

लालचन्द—पर यह तो बताइए कि पैदावार कैसे बढ़े। ट्रैक्टर हम नहीं खरीद सकते। और ट्रैक्टर लायक ज़मीन ही कितनों के पास है। कोई ज़्यादा पढ़े-लिखे भी नहीं हैं जो झट से नए-नए तरीके सीख लें। नए औज़ार पहले तो खरीदना ही कठिन और उनका इस्तेमाल करना भी तो आना चाहिए।

ग्राम-सेवक—लालचन्द जी, बीमारी तो आपने पहचान ली। यही कारण है कि हमारी उपज उतनी नहीं बढ़ रही है, जितनी बढ़नी चाहिए। हमारी सरकार भी इसी नतीजे पर पहुंची है। सरकार में खेती-बाड़ी के मामलों के जो बड़े-बड़े माहिर हैं, उन्होंने ठीक यही बात कही है, जो आप कह रहे हैं।

रामदत्त—ग्राम-सेवक जी, हमारे लालचन्द जी क्या किसीसे कम हैं। मुझे डर है कि कहीं सरकार सलाह-मशविरे के लिए इन्हें भी दिल्ली न बुला ले। कोई मंतरी-वंतरी न बना दे।

लालचन्द—कर लो भाई मज़ाक। हम किसी लायक होते तो तुम ऐसी बात कहते ही नहीं।

तारादत्त—ग्राम-सेवक जी, बीमारी का पता तो लग गया पर इसका इलाज क्या है। भाई लालचन्द जी, इसका इलाज भी बताओ।

लालचन्द—भई, इस बीमारी के मरीज़ हैं किसान।

और मैं भी एक छोटा-सा किसान हूं। इसलिए बीमारी को जानता हूं। रही इलाज की बात! इलाज तो यही समझ में आता है कि किसानों की माली हालत सुधरे और नए-नए तरीके सिखाए जाएं तो कुछ बात बन सकती है।

ग्राम-सेवक—ठीक यही बात है। सरकार ने बहुत सोच-विचारकर इसका भी एक उपाय सोचा है। पर सरकार का कोई उपाय तब तक कारगर नहीं हो सकता, जब तक किसान भाई उन उपायों को अपनाने के लिए तैयार न हों।

रामदत्त—अगर उस उपाय से किसानों को लाभ होगा तो क्यों नहीं अपनाएंगे।

ग्राम-सेवक—लाभ तो होगा ही पर हमारे किसान भाई किसी भी नई बात को अपनाने के लिए तैयार ही नहीं होते। उन्हें कोई नई बात सीखने को कहो तो कहते हैं—"भला बूढ़े

तोते भी कभी पढ़े हैं।" तोता बेचारा पक्षी है और सिखाने पर आदमी की बोली बोलने लगता है। आदमी और पशु-पक्षियों का मुकाबिला ही क्या! वैसे यह आप सर्कस में कई बार देख चुके हैं कि सिखाने पर शेर जैसा खूँखार जंगली जानवर भी क्या कुछ नहीं सीख जाता।

उनका दूसरा जवाब होता है—"हमारे बाप-दादा जैसे करते आए, हम तो उसी ढंग से करेंगे।" भला आप ही बताएं कि अगर कोई कहे कि "यह कुआं मेरे दादा का बनवाया हुआ है; इसलिए मैं तो इसके खारे पानी को भी चाव से पिऊंगा। दूसरे कुएं का पानी नहीं पिऊंगा।" मुझे तो यह समझदारी की बात नहीं लगती।

गंगाराम—आप ठीक ही कह रहे हैं।

ग्राम-सेवक—बात यह है कि दुनिया तरक्की कर

है। साइंस ने कई नई-नई बातें खोज निकाली हैं। उन बातों को जो लोग नहीं अपनाएंगे, वे पीछे रह जाएंगे। दुनिया आगे बढ़ जाएगी। और रही बाप-दादा की बात। उसका जवाब यह है कि आज से बीस साल पहले इस गांव में कितने घर थे और अब कितने और बढ़ गए हैं। तब जो कुछ पैदा होता था, उससे लोगों का पेट भर जाता था। पैदा तो अब भी कम नहीं होता। पर आबादी बढ़ गई है। और बढ़ती जा रही है। खाने वाले बढ़ते जा रहे हैं। धरती जितनी थी उतनी ही रही। अब ज़रूरत इस बात की है, कि इसी धरती से आगे से ज्यादा पैदा किया जाए। जब जैसी ज़रूरत होती है, वैसी ही तरकीबें आदमी खोज निकालता है। इसलिए सरकार ने यह नया तरीका सोच निकाला है।

रामदत्त—ग्राम-सेवक जी, कुछ बताइये भी कि

वह नया तरीका है क्या ?

ग्राम-सेवक—वह भी बताऊंगा। चकबन्दी करने की बात सरकार ने कही तो पहले सबने उसका विरोध किया। पर आप ही बताइए गंगाराम जी, उससे किसानों को कितना लाभ हुआ। नई मशीनी खाद के बारे में भी यही हुआ। अब लोगों ने उसका जादू जैसा असर देखा तो "वाह-वाह" करने लगे।

चकबन्दी में हो सकता है किसीको अपनी बढ़िया जमीन के बदले कहीं ज़रा-सी घटिया ज़मीन मिल गई हो। पर कुल मिलाकर तो उससे किसानों को लाभ ही हुआ। किसानों का लाभ देश का लाभ। कभी कोई बात ऐसी भी होती है, जिससे हमें सीधा लाभ होता दिखाई नहीं देता। पर गांव भर को उससे लाभ होता है। तो उसमें भी हमें अपना ही लाभ समझना चाहिए।

रामदत्त—आज तो मालूम पड़ता है, आप पहेलियां ही बुझाएंगे।

लालचन्द—हां रामदत्त जी, बात तो कुछ ऐसी ही लगती है।

ग्राम-सेवक—नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। मालूम पड़ता है कि आप उस उपाय को जल्दी-से-जल्दी जानना चाहते हैं।

लालचन्द—यह तो है ही।

ग्राम-सेवक—और मैं चाहता हूं, जैसी उतावली आपको सुनने की है, वैसी ही अमल करने की भी हो तो जानें।

गंगाराम—बगैर कुछ अता-पता लगे कोई इस बात का जवाब कैसे दे सकता है। हमें उसमें लाभ दिखाई देगा तो अपनी गरज के लिए अमल करेंगे।

ग्राम-सेवक—अच्छा तो सुनिये—

इस नए तरीके के मूल में जो बात है, वह

आपकी जांची-परखी हुई है। वह है सहकारिता। चाहे कितना ही बड़ा दुःख हो, अगर सब मिलकर उसका सामना करें तो बड़ी आसानी से पार पा सकते हैं। पहले किसानों की सारी कमाई साहुकारों के घर चली जाती थी। जब कोआपरेटिव बैंक बने तो किसानों को राहत मिली। उन्हें मामूली सूद पर कर्जा मिलने लगा।

इस समय किसानों के पास ज़मीन कम है। पर जोड़ी बैल तो उन्हें रखने ही पड़ते हैं। यही जोड़ी बैल इससे कई गुणी ज़मीन को जोत सकते हैं। मतलब यह कि कम ज़मीन होने के कारण किसान का खर्च ज्यादा बैठता है। इसलिए सरकार का सुझाव है—सहकारी खेती की जाए।

लालचन्द—सहकारी खेती। सहकारी बैंक और सहकारी समिति तो सुनी थी पर यह सहकारी

खेती क्या है ?

ग्राम-सेवक—सहकारी खेती का मतलब मैं आप को विस्तार से समझाता हूं।

सहकारी खेती का अर्थ है कि सारे गांव की ज़मीन को एक इकाई मानकर, उसका इन्तज़ाम किया जाए। बीज, खाद, जुताई, कटाई, और फसल बेचने-बांटने तक सारा इन्तज़ाम करने वालों में गांव के वे सारे लोग शामिल हों, जिनकी ज़मीन हो। जो पैदावार हो वह ज़मीन की मलकियत के हिसाब से बांट ली जाए।

गंगाराम—ज़मीन के मालिक तो किसान ही रहेंगे न ?

ग्राम-सेवक—गांव की ज़मीन को इकाई बनाने के कई तरीके हैं। उनमें से जो भी तरीका जिस गांव को पसन्द हो, उसी तरीके को अपना लें।

लालचन्द—तो कौन-कौन से तरीके सरकार ने सुझाए हैं, यह भी बता दीजिये।

रामदत्त—उनमें से कोई न कोई तो लालचन्द जी आपको भी पसन्द आ जाएगा।

लालचन्द—भई, मुझे पसन्द-नापसन्द होने से क्या होता है। यह तो सब की पसन्द का मामला है।

रामदत्त—'हाथी के पांव में सब का पांव।' आप को पसन्द आ जाएगा तो गांव वालों को भी पसन्द आ जाएगा।

ग्राम-सेवक—ये चार तरीके सरकार ने सुझाए हैं।

१—ज़मीन की मलकियत तो सब की अपनी-अपनी रहे पर गांव की सारी ज़मीन के इन्तज़ाम का काम उसे एक इकाई मानकर किया जाए। ज़मीन के मालिकों को मलकियत के लिए लाभ में से कुछ दे दिया जाए। या—

२—ज़मीन के मालिक एक निश्चित समय तक के

लिए अपनी ज़मीन सहकारी समिति को पट्टे पर दे दें। मालिकों को सरकार द्वारा या आपसी समझौते द्वारा जो भी लगान तय हो जाए, दे दिया जाए। या—

३—ज़मीन के मालिकाना हक सहकारी समिति को दे दिये जाएं और ज़मीन की कीमत के रूप सहकारी समिति के हिस्से (शेयर) पुराने मालिकों को दे दिये जाएं।

४—चौथा तरीका यह है कि न तो मलकियत छोड़ी जाए और न ही सारे गांव की जमीन इकट्ठी की जाए। अपनी-अपनी ज़मीन और अपनी-अपनी मालकीयत पर एक सहकारी समिति बना ली जाए। यह समिति अपने सभी सदस्यों के लिए अच्छे बीज, अच्छी खाद, पशु और खेती के औज़ार ठीक कीमत पर दे। वह किसानों को ज़रूरत के समय कम सूद पर रुपया भी दे। पर नकद रुपया

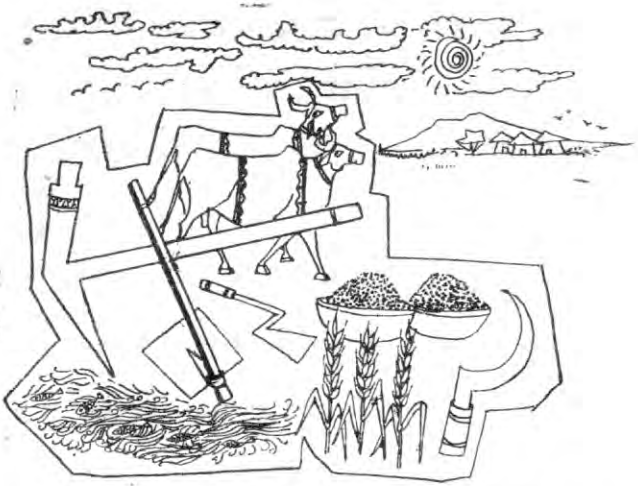

सिर्फ खेती-बाड़ी के लिये ही दिया जाए।

यह सहकारी समिति प्रति एकड़ पैदावार बढ़ाने में मदद देगी। वह पैदावार को बेचने का प्रबन्ध भी करेगी।

इस चौथी किस्म की सहकारी समिति में और तो सारी ही खूबियां हैं पर एक कमी है। वह यह कि छोटे खेतों और बिखरे हुए खेतों के कारण जो कठिनाई होती है, उसे नहीं रोका जा सकता।

इसी लिये सरकार यह चाहती है कि पहले तीन प्रकार की खेती सहकारी समितियों में से किसी न किसी को अपनाया जाए।

लालचन्द—तो यह तरीका अपनी ही सरकार ने निकाला है या और भी कहीं ऐसा होता है?

रामदत्त—लालचन्द जी, मैं दिल्ली में खेती-बाड़ी की नुमाइश देखने गया था न। वहां पर रूस और अमरीका वालों के मण्डप देखने पर मालूम हुआ था कि वहां कुछ इसी तरह से खेती होती है।

ग्राम-सेवक—ठीक है। रूस और अमरीका ने अपनी प्रति एकड़ पैदावार में इन्हीं तरीकों से तरक्की की है। पर उनके और हमारे ढंग में बहुत फर्क है। वहां जिस ढंग से काम होता है, वह भी आपको बताऊंगा।

गंगाराम—इसका मतलब है कि यह कोई नया तजर्बा नहीं है। कुछ दूसरे देश इस तरह कर चुके हैं।

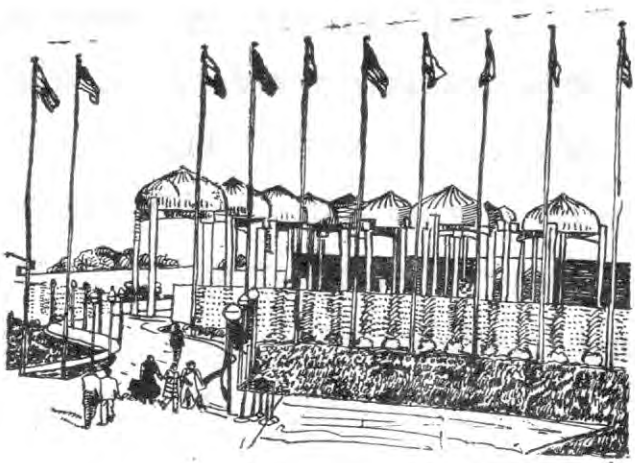

लालचन्द—और क्या। हम तो सदियों दूसरों की गुलामी में जकड़े रहे। अब जब से आज़ाद हुए हैं, तभी से नई-नई स्कीमें चालू हुई हैं। पर इन दस-बारह सालों में ही देश का कितना काया-पलट हो गया है।

ग्राम-सेवक—सहकारी ढंग से खेती करने वाले प्रमुख दो बड़े-बड़े देश हैं। इन दोनों ही देशों ने प्रति एकड़ पैदावार कई गुणा बढ़ा दी है। रूस का अपना अलग तरीका है।

वहां खेत किसान के नहीं सरकार के होते हैं। खेती में काम करने वालों को तनखा दी जाती है। पर भारत में यह ढंग लागू नहीं हो सकता। यहां सरकार खेतों की मालिक नहीं बनना चाहती। रूस में खेत बहुत बड़े-बड़े हैं। पांच हजार एकड़ से लेकर दस हजार एकड़ तक उन का फैलाव है। दूसरी बात वहां यह है कि बहुत-सा काम मशीनों द्वारा होता है।

हमारे यहां की सहकारी खेती की योजना किसी ज़ोर-ज़बरदस्ती करने वाले कानून से नहीं, किसानों की मर्ज़ी से चलाई जाएगी।

दूसरा ढंग अमरीका वालों का है। वहां पहले कम्पनी बनाकर उसके हिस्से बेचकर रुपया जमा किया जाता है। उस रुपए से ज़मीन खरीद ली जाती है। फिर नौकर रखकर उनसे मशीनों द्वारा खेती कराई जाती है। पैदावार बेचकर जो बचत होती वह, हिस्सेदारों में बांट

ली जाती है।

यह ढंग भी अपने देश में चालू नहीं किया जा सकता। उसके कई कारण हैं। पहला तो यह कि इस तरह बहुत कम लोगों को रोज़गार मिलता है। जो लाभ होता है, वह गिने-चुने लोगों में बंट जाता है। बेचारे मज़दूर के पल्ले मज़दूरी के इलावा कुछ नहीं पड़ता। हमारे देश में पूंजी की भी कमी है। और आबादी ज्यादा होने के कारण ज्यादा लोगों को काम देने की ज़रूरत होती है। तीसरी खास बात यह है कि हमारी सरकार तो ऐसा समाज बनाना चाहती है, जिसमें अमीरी-गरीबी का फर्क कम होता जाए। इस तरीके से सारा लाभ पैसा लगाने वालों की जेब में चला जाता है।

रामदत्त—सरकार को कोई ऐसा ही तरीका निकालना चाहिये। जिसमें बुराइयां न हों। किसान को उसका पूरा-पूरा हक मिल जाए और पैदा-

वार भी बढ़े। और खर्चे कम बैठें।

ग्राम-सेवक—यही तो सरकार भी चाहती है। खर्च तो तभी घट सकता है, जब कि गांव की सारी ज़मीन का इन्तज़ाम उसे इकाई मानकर किया जाये। मैं अपनी बात एक मिसाल देकर समझाऊंगा। मान लीजिये कि दस किसानों के पास एक-एक एकड़ ज़मीन है। सब के पास दो-दो बैल हैं और एक-एक हल। अगर इस सारी ज़मीन को इकट्ठा कर दिया जाए तो भी दस एकड़ ज़मीन जोतने के लिए एक जोड़ी बैल काफी हैं। एक हल और एक हलवाहा। इस तरह नौ जोड़ी बैल, नौ हल और नौ हलवाहे फालतू हो जाते हैं।

एक बात और है। मान लीजिये, सरकार खेती के बारे में कोई नई बात बताना चाहती है, कोई नया तरीका लागू करना चाहती है। अगर गांव की सारी ज़मीन का

इन्तजाम एक कमेटी के हाथ में है तो सरकार एक आदमी को समझा-बताकर वह तरीका चला सकती है। सारे गांव की ज़मीन के लिए एक सीखा-पढ़ा आदमी भी रखा जा सकता है। किन्तु यदि सौ किसानों की अपनी-अपनी खेती हो तो यही बात सौ आदमियों को समझानी पड़ेगी। उनमें से अगर कोई सीखा-पढ़ा न हुआ तो कोई भी उस नए तरीके को अमल में नहीं लाएगा।

तीसरी बात यह है कि सहकारी खेती से किसानों में आपसी मेल-मिलाप बढ़ेगा। मिलकर काम करने में उनका उत्साह बढ़ेगा।

लालचन्द—ग्राम-सेवक जी, अपनी छोटी-सी समझ में तो यह बात आती है कि सरकार पहले इस तरीके से कुछ ज़मीन पर खेती कराए। जब उसमें लाभ होगा तो देखा-देखी सभी किसान भाई नए ढंग को अपना लेंगे। मुझे

अकबर-बीरबल की एक कहानी याद आ गई। कहते हैं कि अकबर ने एक बार एक लकीर खींची। फिर उसने अपने दरबारियों से कहा कि इस लकीर को छोटा करो। पर इसे न तो मिटाना होगा और न काटना होगा। सभी ने माथा-पच्ची की लेकिन किसी को कोई तरीका नहीं सूझा। आखिर में अकबर ने बीरबल से कहा। बीरबल ने उस लकीर के बराबर एक दूसरी लम्बी लकीर खींच दी। लम्बी लकीर खींचने से पहली लकीर उससे छोटी हो गई। बीरबल ने कहा—जहांपनाह! आपकी लकीर छोटी है। सभी दरबारी और अकबर बीरबल की चातुरी देखकर अचम्भे में रह गए। तो बस, यही सब से बढ़िया तरीका मेरी समझ में आता है।

रामदत्त—बड़ी दूर की कौड़ी पकड़ लाए लालचन्द जी आप तो! क्या खूब बात कही है।

ग्राम-सेवक—यही तो सरकार भी सोच रही है। सरकार का विचार है कि गांवों से बाहर जो बेकार ज़मीन पड़ी है, उसे इस काम के लिए चुना जाए। या फिर तराई के इलाके की ज़मीन को खेती योग्य बनाकर वहां यह प्रयोग किया जाए।

सरकार एक और काम कर रही है। कई प्रदेशों में तो वह हो भी गया है। वह काम यह है कि खेती की ज़मीन की एक हद मुकर्रर कर दी जाए। अर्थात् एक परिवार के पास ज़्यादा से ज़्यादा इतने एकड़ ज़मीन रह सकती है, इससे ज़्यादा नहीं। इस तरह बड़े ज़मीनदारों से जो ज़मीन मिले, उस पर सहकारी-खेती कराई जाये।

एक सुझाव यह भी है कि आचार्य विनोबा भावे को भूदान में जो ज़मीन मिली है, उसपर सहकारी खेती का प्रयोग किया जाए। इस तरह कई बातें सामने हैं।

गंगाराम—ग्राम-सेवक जी, सुना है कि कुछ लोग सहकारी खेती का विरोध भी कर रहे हैं। क्या यह बात ठीक है ?

ग्राम-सेवक—हां, यह सच है। पर गंगाराम जी, आप ही बताइये, इसमें हैरानी की बात क्या है ? हमेशा ही सभी जगह लोग नई बात को एकदम तो अपना नहीं लेते। पहले कुछ विरोध होता ही है। सीधी-सच्ची बात तो यह है कि जब सहकारी खेती से किसानों को लाभ होता दिखाई देगा तो विरोध करने वालों की कोई नहीं सुनेगा।

मुझे इसमें एक अच्छी बात भी दिखाई देती है। हमारे देश में प्रजातंत्र है। प्रजातंत्र माने प्रजा की सरकार। इस देश में कोई भी कानून-कायदा तब तक लागू नहीं किया जा सकता, जब तक जनता के प्रतिनिधि उसे कबूल न कर लें। पार्लमेंट में सारे देश के

प्रतिनिधि और जानकार लोग हैं। सहकारी खेती में अगर कुछ कमियां होंगी और विरोधी लोग उन्हें बतायेंगे तो सरकार को उन कमियों के बारे में सोचना ही पड़ेगा। इस तरह कमियां दूर होकर, यह और भी लाभ-दायक साबित हो सकती है।

लालचन्द जी, एक बात बताना तो मैं भूल ही गया। बड़ी ज़रूरी बात है वह। जो लोग सहकारी खेती का विरोध कर रहे हैं, शायद उन्हें यह नहीं मालूम कि इस समय भी देश में कोई दो हज़ार सहकारी खेती-समितियां काम कर रही हैं।

हमारे प्रधानमंत्री ने जिस दिन लोक-सभा के सदस्यों को यह बताया, उस दिन सभी हैरान रह गये। वे समझते थे कि इस तरह की एक भी समिति नहीं होगी। प्रधानमंत्री जी ने लोगों को यह भी बताया

कि सहकारी खेती में शामिल किसानों ने मुझे बताया है कि इस ढंग से पैदावार बढ़ी है और उन्हें लाभ हुआ है।

एक और बड़ी ज़ोरदार बात नेहरू जी ने कही। वे बोले—हमारी ज़रूरत यह है कि बड़े-बड़े खेत हों। यह बात दो तरीकों से हो सकती। एक तो यह है कि देश में बड़े-बड़े ज़मीनदार हों। वे थे भी। पर सरकार ने ज़मीनदारी का तो अन्त कर दिया। उस का अन्त करना जरूरी भी था। अमीरी-गरीबी का फर्क कम करने के लिये भी और किसानों को उनकी मेहनत का पूरा-पूरा फल मिले, इसलिये भी। अब सिवा सहकारी खेती के और कोई रास्ता किसीको दिखाई नहीं देता।

जवाहरलाल जी ने यह बात भी साफ-साफ कह दी है कि सहकारी खेती

किसानों की मर्जी के बगैर, कानून द्वारा नहीं थोपी जायेगी। उन्होंने कहा कि पहले हम सेवा-सहकार समितियां बना दें। इन समितियों के लिये सभी दलों और विचारों वाले लोग तैयार हैं। जैसा कि पहले बताया था, ये समितियां किसानों को अच्छा बीज, खाद, खेती के नये औज़ार उचित मूल्य पर देंगी। खेती की उपज को मण्डियों में ठीक दामों पर बेचने का प्रबन्ध भी करेगी।

खेत पहले ही की तरह अपने-अपने और अलग-अलग रहेंगे।

जवाहरलाल जी का कहना है कि किसानों को इन समितियों द्वारा जब लाभ पहुंचेगा, तो वे सहकारी खेती की बात को आसानी से समझ और मान सकेंगे।

पर उन्होंने यह भी कहा कि सेवा-

सहकार समितियां हमारा पहला पग हो सकता है। वह हमारी आखिरी मंजिल नहीं है। सेवा-सहकारी समितियां पैदावार में थोड़ी बढ़ोतरी ज़रूर कर सकती हैं। पर वे किसान की गरीबी की जड़ें नहीं उखाड़ सकतीं। उस के लिए तो हमें छोटे-छोटे ज़मीन के टुकड़ों को मिलाकर बड़ी इकाई बनानी ही पड़ेगी।

सरकार ने साल भर पहले यह निश्चय किया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक कम से कम तीन हज़ार सहकारी खेती के प्रयोग और किये जाएं। वास्तव में पहली दो हज़ार सहकारी खेती समितियां जो विभिन्न प्रदेशों में काम कर रही हैं, वे किसानों की अपनी मर्ज़ी से बनी हैं। उन्हें बनाने में सरकार का हाथ नहीं है।

गंगाराम—ग्राम-सेवक जी, आपने बताया न कि किसानों ने अपनी मर्जी से दो हज़ार सहकारी

सहकारी खेती समितियां बनाई हुई हैं। ये किस-किस प्रदेश में हैं ?

ग्राम-सेवक—गंगारामजी, ये समितियां तो देश के सभी प्रदेशों में हैं। हां, इतनी बात ज़रूर है कि किसी प्रदेश में कम हैं और किसी में ज़्यादा। मैं इन का पूरा ब्योरा आपको बता देता हूं। यह कोई साल भर पहले का ब्योरा है। साल भर में तो कितनी ही और बन गई होंगी।

विभिन्न प्रदेशों में सहकारी खेती समितियां

प्रदेश	समितियों की संख्या
असम	१७०
आन्ध्र प्रदेश	३१
बिहार	२७
बम्बई	४०२
देहली	२२
जम्मू-काश्मीर	७

केरल	५५
मध्य-प्रदेश	१४०
मद्रास	३७
मणिपुर	३
मैसूर	१००
उड़ीसा	२८
पंजाब	४७८
राजस्थान	१०५
त्रिपुरा	१२
उत्तर-प्रदेश	२५५
पू० बंगाल	१४८
	२,०२०

इस काम में पंजाब सब प्रदेशों से आगे है। दूसरा नम्बर बम्बई का है।

बम्बई राज्य में तो यह कानून बन गया है कि अगर किसी इलाके के सौ में छियासठ किसान सहकारी खेती समिति

बनाने के हक में हों और वे इलाके की ज़मीन के दो तिहाई भाग के मालिक भी हों तो बाकी तैंतीस किसानों को भी सहकारी खेती समिति में शामिल होना पड़ेगा। और भी दो-तीन राज्यों ने इसी तरह के कानून बनाये हैं।

लालचन्द—गंगाराम जी, किसी दिन गांव भर की सभा करके सहकारी खेती की बातें सभी को समझाई जायें। देखें, लोग क्या कहते हैं?

रामदत्त—भले काम में देर कैसी? जिस दिन कहो, उसी दिन कर लें।

गंगाराम—ग्राम-सेवक जी का उस दिन यहां होना बहुत ज़रूरी है।

ग्राम-सेवक—मुझे आप दिन बता दीजिये। मैं यहीं रहूंगा। मैं तो आप लोगों का सेवक हूं।

लालचन्द—सेवक नहीं, आप हमें रास्ता दिखाने

वाले हैं। बस, आगे-आगे आप और पीछे-पीछे हम।

तो फिर रामदत्त जी, अमावस का दिन रख लिया जाये। मेरे विचार में तो वह सब से ठीक रहेगा।

रामदत्त—हां, मेरे विचार में भी अमावस का दिन ठीक रहेगा।

ग्राम-सेवक—तब तक आप तीनों जने गांव के लोगों से अपने तौर पर तो बात करें ही। उन्हें इसके लाभ समझायें। देखिये, यह सीधी-सच्ची बात है, जिससे कोई इनकार नहीं कर सकता कि कोई भी काम हो, वह मिलजुलकर करने से आसान तो हो ही जाता है, बढ़िया भी होता है। जरूरत है तो बस एक बात की। काम करने वाले सारे गांव को अपना परिवार समझें। और इसमें कुछ भी झूठ नहीं है कि गांव भी बड़ा

परिवार ही तो है। हम एक-दूसरे के मित्र बनकर रहें, मन में किसी तरह का मैल न रखें। तो सफलता दूर नहीं है। और अगर लोगों में काम के लिये लगन और उत्साह न हो, तब तो कोई भी काम नहीं हो सकता। चाहे वह काम घर का हो या गांव का।

लालचन्द—हां जी, आखिर काम तो हमीं को करना है। किये बगैर तो कुछ होने-जाने का नहीं।

ग्राम-सेवक—आज की बातचीत काफी लम्बी हो गई। पर मैं यह कह सकता हूं कि बातचीत थी काम की। कोई ऊबा नहीं। तो अमावस्या का दिन तय रहा न। अब मुझे आज्ञा दीजिये। मुझे पास वाले गांव में जाना है।

◇ ◇ ◇